RESEARCH FRONT

ISSN
(Print) 2320 – 6446, (Online) 2320 – 8341

नेपाल में लोकतांत्रिक चेतना का विकास और लोकतंत्र की स्थापना : एक विश्लेषण

छबिलाल
शोध–छात्र, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ।

प्रस्तुत शोध–प्रपत्र के अन्तर्गत नेपाल में लोकतांत्रिक चेतना का विकास और लोकतंत्र की स्थापना को संदर्भ में रखकर शोध–प्रपत्र प्रस्तुत करने का सार्थक प्रयास किया गया है। नेपाल में प्रारम्भ से ही राजशाही स्थापित थी। इसके अच्छे एवं बूरे प्रभावों का वहॉ की जनता को ऐहसास था। लोकतंत्र की स्थापना से पूर्व नेपाल में निरंकुश राजतंत्र, असीमित अधिकारों वाली राणाशाही, संवैधानिक राजतंत्र, पंचायत व्यवस्था के नाम पर निर्दलीय समिति लोकतंत्र जैसी अलग–अलग तरह की शासन प्रणालियां काम कर रही थी। इन सभी शासन प्रणालियों के दमन चक्र के शोषण से नेपाल की जनता बहुत ही ज्यादा परेशान थी। जिसके कारण से नेपाल में एक प्रकार का विरोधी वर्ग इन शासन व्यवस्था के प्रतिक्रिया स्वरूप दिखाई देने लगा था। नेपाल की जनता के प्रतिदिन की जरूरतों का भी वहॉ के शासकों द्वारा ख्याल नही रखा जाता था। राजशाही के नियंत्रण में एक प्रकार का राणाशाही की स्थापना किया गया था। इस प्रकार नेपाल में एक लम्बा दमन चक्र और शोषण का खेल प्रारम्भ हो गया था। इससे आजादि के लिए जो नया वर्ग संघर्ष में आगे आया उसने नेपाल के स्वरूप में परिवर्तन लाने में जिन साधनों का प्रयोग किया उसका विश्लेषण करने का प्रयास किया गया है। सैद्वांतिक आधार पर प्रस्तुत शोध प्रपत्र को नेपाल की राजनीतिक समस्याओं को ध्यान में रखकर विश्लेषण करने का प्रयास किया जा रहा है, जिससे इस अध्ययन को राजनीतिक विज्ञानि दृष्टिकोण प्रदान किया जा सके।

Key Words : नेपाल की राजशाही, राणाशाही, जनता की प्रस्थिति, राजनीतिक चेतना का विकास, आन्दोलन की भूमिका, राजनीतिक परिवर्तन तथा पंचायती व्यवस्था का प्रारम्भ, लोकतंत्र की स्थापना।

भूमिका / परिचय : Background/Introduction

नेपाल मुख्यतः हिमालय की पर्वत श्रृंखलाओं के मध्य बसा है। उत्तर में चीन का तिब्बत क्षेत्र तथा दक्षिण, पूर्व तथा पश्चिम में भारत की सीमायें इसे छूती हैं। नेपाल का क्षेत्रफल लगभग 147181 वर्ग कि0मी0 है।[1] यह दक्षिण एशिया का तीसरा सबसे बड़ा देश है। नेपाल को मुख्यतः तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है। पर्वतीय क्षेत्र, घाटी क्षेत्र एवं तराई क्षेत्र। इनमें पर्वतीय क्षेत्र उत्तरी नेपाल में स्थिति है जो सबसे ऊँचा है। विश्व के दस उच्चतम पर्वतों में से आठ पूर्णतः या अंशतः इसी क्षेत्र में अवस्थित है। इनमें माउंट एवरेस्ट (सागरमाथा) (8848 मी0), कंचनजंधा (8598 मी0), महालू (8481 मी0), धौलागिरी (8172 मी0) तथा अन्नपूर्णा–प्रथम (8091 मी0) सम्मिलित है।[2] मध्य हिमालय क्षेत्र या घाटी क्षेत्र में सेती, करनाली, हेरी काली गण्डकी, त्रिशूली, संकोसी, अरूण तथा तामूर अनेक नदियाँ बहती हैं। ये नदियाँ अभिसरित होकर चार प्रमुख नद अवस्थाओं करनाली, नारायणी, गण्डकी तथा कोसी का निर्माण करती हैं जो घाटी क्षेत्र के महाखण्डों से गुजरती हुई बहती हैं। मध्य हिमालय के क्षेत्र में पर्वत श्रृंखलाओं का अधिकतम उठाव 1000 से 2000 मीटर के मध्य है। इस क्षेत्र में अनेक समतल घाटियाँ हैं जिनमें कृषि होती है। तराई नेपाल का दक्षिणतम क्षेत्र है जो सामान्यतया समतल तथा उर्वर हैं। इसका अधिकतम क्षेत्र गंग प्रदेश का उत्तरी विस्तार है। भारत की तरह नेपाल भी कृषि प्रधान देश है। यहाँ की 85 प्रतिशत जनसंख्या कृषि कार्य में लगी हुई है। इसके कुल क्षेत्रफल का केवल 10 प्रतिशत भाग ही कृषि योग्य है।[3]

ISSN
(Print) 2320 – 6446, (Online) 2320 – 8341

नेपाल का ऐतिहासिक आविर्भाव प्रथम सहस्त्राब्दि ईसा पूर्व से ही हो गया था, परन्तु एक आधुनिक देश के रूप में, 18वीं शताब्दी में ही विकसित हुआ। किराट पर्वतीय जनजाति काठमाण्डू क्षेत्र के प्रथम शासक माने जाते हैं, परन्तु लिच्छवी वंश नेपाल का निश्चित रूप से प्रथम राजवंश था जो लगभग चार सौ ईसवी के आसपास स्थापित हुआ। नेपाल के राजनैतिक इतिहास की प्रमाणिक जानकारी 12वीं शताब्दी में लिच्छिवी शासनकाल से ही मिलती है, फिर भी नेपाल के इतिहास पर रोशनी डालने वाले शिलालेख और हस्तलिखित वंशावलियां व अन्य प्राचीन साहित्य यह बताते हैं कि यहाँ गोपाल वंशियों, किरात वंशियों और सोम वंशियों, ठकुरी वंशियों, लिच्छवि वंशियों, व सूर्य वंशियों ने भी शासन किया।[4]

नेपाल राज्य की स्थापना

मल्लों का नेपाल में उदय 12वीं शताब्दी के अंतिम वर्ष में माना गया है और इन्होंने 1769 तक शासन किया। यह राजपूत थे और भारत से आये थे।[5] तेरहवीं शताब्दी में अलाउद्दीन खिलजी के आक्रमण से भयभीत होकर चित्तौड़ के राजा चित्रसेन के भाई जिलराय और अंजलि राय अपने सात सौ सैनिकों के साथ हिमालय के तलहटी में जाकर अवस्थिति हुये। उस समय गंडक नदी के पश्चिमी क्षेत्र में करम सिंह का राज्य था। जिसकी राजधानी राजपुर थी। जिलराय और अंजलि राय ने 20 वर्षों तक राजा करम सिंह की सेवा की और फिर उन्होंने उनके राज्य पर अधिकार कर लिया। इन्हीं के वंशजों में आगे चलकर पृथ्वी नरायण शाह गोरखा राज्य का शासक हुआ। जिसने अनेक छोटे–छोटे राज्यों को मिलाकर 1769 में नेपाल राज्य की स्थापना की।[6]

राणाशाही अथवा राणावाद की स्थापना

शाहवंश के अंतिम राजा राजेन्द्र ने स्वयं को षड्यंत्रकारी राजनीति में फंसा लिया। आपसी प्रतिस्पर्धा में लगे गुटों को एक दूसरे से भिड़ाते रहने के उसके प्रयासों ने नेपाल को राजनैतिक अराजकता की ओर धकेल दिया। एक के बाद एक तेजी से मंत्रिमंडल बदलते गए। इसने देश को गृह युद्ध के कगार पर पहुंचा दिया और इस का फायदा जंग बहादुर राणा ने उठाया। जिसने 1846 में, राजमहल के अहाते में भारी कत्लेआम कराकर सभी विरोधी राजनैतिक गुटों का सफाया कर दिया। उसने आतंक के जरिए, सत्ता पर कब्जा किया, राजा को विशेषाधिकारों से वंचित किया और निरकुंश सत्ता को स्वयं अपने परिवार के हाथों में केन्द्रित कर लिया। उसने अड़ियल किन्तु निरीह राजा सुरेन्द्र से जबर्दस्ती 1856 की सनद (राजसी आदेश) जारी करवाकर अपने परिवार की हैसियत को राजनैतिक संरचना के भीतर स्थापित कर लिया। इस दस्तावेज ने राणा शासन के अस्तित्व के लिए एक वैधानिक आधार प्रदान कर दिया। इसने जंग बहादुर तथा उसके उत्तराधिकारियों को, नागरिक तथा सैन्य प्रशासन, न्याय तथा विदेशी संबंधों में निरंकुश सत्ता प्रदान कर दी, जिसमें राजा के आदेशों को भी यदि वे राष्ट्रीय हितों के लिए अपर्याप्त अथवा विरोधाभासयुक्त समझें, उसे उन आदेशों को नजरअंदाज कर देने का अधिकार शामिल था। इस तरह, राजसी परिवार ने अपनी सभी संप्रभु शक्तियों का राणाओं के समक्ष समर्पण कर दिया। इसके बदले में शाह राजाओं को विडम्बनापूर्ण महाराजाधिराज (राजाओं के राजा) की उपाधि से सम्मानित किया गया।[7] इस तरह से जो राजनैतिक प्रणाली उभर कर सामने आयी, उसे राणाशाही अथवा राणावाद कहा जाता है।

राणा प्रशासकों ने राजनैतिक प्रशासनिक प्रणाली के स्वेच्छाचारी चरित्र को बरकरार रखा जिसमें राणा प्रधानमंत्री सत्ता का वास्तविक स्रोत बन गया। शाह के शासन के दौरान राजनैतिक एवं प्रशासनिक पदों पर बैठे पुराने कुलीनों को हटाकर उनके स्थान पर राणा परिवार के सदस्यों को बैठा दिया गया। राणा प्रधानमंत्री के पद पर उत्तराधिकारी के रूप में एक के बाद दूसरा भाई आसीन होता गया। राणा शासकों ने किसी संविधान का निर्धारण नहीं किया। हालांकि वे देश का प्रशासन चलाने के लिए कभी–कभी फरमान तथा उद्घोषणाएं जारी करते रहते थे। राणाओं की कानूनी एवं प्रशासनिक प्रणाली फरमानों एवं उद्घोषणाओं द्वारा ही विकसित हुई।[8] यद्यपि राणा शासकों ने एक ऐसी निरंकुश

ISSN
(Print) 2320 – 6446, (Online) 2320 – 8341

राजनैतिक प्रणाली स्थापित की, जिसके तहत देश को अलग–थलग रखने, समाज को राजनैतिक रूप से दबाकर रखने तथा अर्थव्यवस्था को पिछड़ा हुआ रखने के लिए सभी संभव प्रयास किए गए किन्तु देश परिवर्तन की उन हवाओं से अप्रभावित नहीं रह सका, जो समूचे एशिया में बह रही थीं। 20वीं शताब्दी की शुरूआत के समय उदीयमान शिक्षित मध्यम वर्ग द्वारा राणा निरंकुशता की आलोचना की जाने लगी और राणा तानाशाही के खिलाफ आवाज उठाने के लिए नेपालियों को प्रेरणा प्रदान की।

दुनिया के इतिहास में इस बात का वर्णन मिलता है कि जब किसी देश की जनता वहां की शासन व्यवस्था से तंग आ जाती है तो उस व्यवस्था के खिलाफ एकजुट होकर एक नई प्रकार की व्यवस्था को स्थापित करना चाहती है। आधुनिक विश्व के अनेकों देशों में क्रांतियों के द्वारा शासन व्यवस्था को बदला गया है। भारत के उत्तरी सीमा पर स्थिति नेपाल का पहाड़ी राज्य एक गम्भीर राजनीतिक संकट के दौर से गुजर रहा है। इस संकट का समापन ही तय करेगा कि नेपाल का राजनीतिक भविष्य क्या होगा ? नेपाल का यह राजनीतिक संकट देश में व्याप्त त्रिकोणात्मक संघर्ष के रूप में है। इस संघर्ष के तीन पक्ष हैं। राजा, राजनीतिक दल तथा माओवादी कम्युनिस्ट। नेपाली माओवादियों का मुख्य सामाजिक जनाधार वहाँ के अल्पसंख्यकों का है, जो मुख्यतः जनजातीय हैं और उनमें अधिकतर बौद्ध धर्म को मानते हैं। गुरूंग, मगर, टाई–केराती आदि वे जनजातियां हैं जो यह समझती हैं कि नेपाल की राजतांत्रिक व्यवस्था में उनके सामाजिक एवं आर्थिक हितों की अवहेलना हुई है। इसके अलावा वहाँ की विशाल गरीब जनसंख्या का एक बड़ा हिस्सा भी इनसे सहानुभूति रखता है। वैसे भी नेपाल के माओवादी कोई विदेशी दलाल नहीं हैं और न ही देशद्रोही हैं। उनका नाम माओवादी है, लेकिन वे माओं के देश के हाथों की कठपुतलियां नहीं हैं। उनका आंदोलन पूर्णरूप से नेपाली आंदोलन है।[9]

नेपाल का इतिहास भारतीय साम्राज्यों से प्रभावित हुआ पर यह दक्षिण एशिया का एकमात्र देश था जो ब्रिटिश उपनिवेशवाद से बचा रहा। यद्यपि अंग्रेजों से हुई लड़ाई (1814–16) और उसके परिणामस्वरूप हुई संधि में तत्कालीन नेपाली साम्राज्य के अर्धाधिक भूभाग ब्रिटिश इंडिया के तहत आ गए और आज भी ये भारतीय राज्य हिमाचल प्रदेश और पश्चिम बंगाल के अंश हैं। नेपाली राजतंत्र राष्ट्रवाद, लोकतंत्र और समाजवाद– कई आयामों से गुजर रहा है। जहाँ तक नेपाली जनता की राष्ट्रीय चेतना और संप्रभुता का सवाल है, नेपाल हमेशा एक स्वतंत्र राष्ट्र रहा है, भले भारत या अन्य दक्षिण एशियाई राष्ट्रों की आजादी की लड़ाई की तरह यहाँ उस ढंग से राष्ट्रीय चेतना का विकास नहीं हुआ।[10]

नेपाल में लोकतांत्रिक चेतना का विकास

20वीं शताब्दी के तीसरे दशक के दौरान, नेपाली अधिकार समिति, प्रचंड गोरखा प्रजा परिषद इत्यादि अनेक संगठन अस्तितव में आ गए। जिनकी स्थापना उन नेपालियों ने की जो भारत में निर्वासित होकर रह रहे थे। इन संगठनों का उद्देश्य नेपाल में एक लोकप्रिय जन आंदोलन का निर्माण करना तथा राणा प्रणाली के स्थान पर एक जनतांत्रिक राजनैतिक व्यवस्था कायम करना था। इन संगठनों ने नेपाल में राजनैतिक सुधारों तथा राणाओं के शासन को खत्म करने की मांग उठाई। इससे नेपाल में आंतरिक असंतोष अभिव्यक्त होने लगा। उस समय उपमहाद्वीप से अंग्रेजों के छोड़कर वापस चले जाने की तैयारियां कर रहे थे जिस कारण से राणा प्रणाली को खतरा महशूस होने लगी। यह बिल्कुल स्पष्ट हो गया था कि स्वतंत्र भारत, राणाओं का समर्थन करने वाली ब्रिटिश नीति का, अनुसरण नहीं कर सकता। उपेक्षा और अवहेलना के शिकार राजा ने भी राणा विरोधी आंदोलनों से हाथ मिला लिया। इस समय नेपाल में कुल मिलाकर षड़यंत्र तथा पारिवारिक कलह ही राजनैतिक प्रक्रिया के लक्षण विद्यमान थे। इस तरह एक शताब्दी का लंबा काल शुरू हुआ। इधर द्वितीय विश्व युद्ध की समाप्ति के बाद लोकप्रिय सरकारों की स्थापना का दौर शुरू हुआ। नेपाली जनता भी इससे अछूती नही रही और इस तरह से भारतीय भूमि पर नेपाली कांग्रेस का जन्म हुआ। इसी बीच भारत से

ISSN
(Print) 2320 – 6446, (Online) 2320 – 8341

अंग्रेजों की वापसी हो गई और बाद में चीन में कम्युनिस्टों की सत्ता कायम होने पर राणा शासक आतंकित हो गए। उस समय के प्रधानमंत्री पदम शमशेर के नेतृत्व वाले राणाओं के उदार गुट ने एक संविधान मंजूर करके नेपाली आंदोलन ठंडा करने की कोशिश की, किन्तु कट्टरवादी तत्व यह भी देने के लिए तैयार नहीं थे और उन्होंने प्रधानमंत्री को इस्तीफा देने के लिए विवश किया। इस तरह, राणा प्रणाली को बदलने के सवाल पर जनता और शासकों के बीच टकराव अपरिहार्य हो गया।

नेपाल में राणा विरोधी जन–तांत्रिक उभार को स्वतंत्र भारत की सरकार ने हमदर्दी के साथ देखा। राणाओं के पश्चिम समर्थक सम्बन्धों तथा जनता की जनतांत्रिक आकांक्षाओं को उनके द्वारा स्वीकार न किए जाने को भारतीय नेतृत्व ने पसंद नहीं किया। भारत की जनता भी नेपाल की जनवादी शक्तियों के साथ थी।[11] पद्म शमशेर ने भारत में प्रथम प्रधानमंत्री के पास अपना एक आदमी भेजा कि वे नेपाल के लिए भी संविधान बनाने में मदद करें। पद्म के आग्रह पर भारत से श्री प्रकाश के नेतृत्व में प्रतिनिधिमण्डल काठमाण्डू आया। 26 जनवरी 1948 को नेपाल का वैधानिक कानून बना।[12] परिणामतः पद्म शमशेर से 1948 के मार्च महीने में जबरिया त्याग पत्र लिखवा लिया गया और मोहन शमशेर प्रधानमंत्री बन बैठा। मोहन शमशेर ने न चाहते हुए भी भारत का दौरा किया। प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू से मिलकर उसने नेपाल में भारतीयों के लिए समान अधिकार देने के मामले में एक मैत्री सन्धि की। उधर मोहन शमशेर 24 सितम्बर 1950 को नेपाल में सक्रिय सुशील चालिसे, गणेशमान सिंह, दिलमान सिंह सहित करीब एक दर्जन से अधिक नेताओं को गिरफ्तार कर लिया।[13] 6 नवम्बर 1950 को राजा त्रिभुवन को अपने परिवार के साथ राजभवन छोड़कर नेपाल स्थित भारतीय दूतावास में शरण लेनी पड़ी।

मोहन शमशेर की नीतियों के खिलाफ अन्ततः नेपाल में सशस्त्र संघर्ष हुआ। नेपाली कांग्रेस के करीब दो सौ कार्यकर्ताओं ने योजनाबद्ध तरीके से वीरगंज से हथियार भण्डार में सरकारी खजाने पर कब्जा कर लिया। हथियार और पैसा आने के बाद इन्होंने राणा सैनिकों से मोर्चा ले लिया। इस सशस्त्र क्रान्ति में भारत की ओर से भी क्रान्तिकारियों की पूरी मदद की गई। गोला–बारूद भी भारत से पहुंचा। वीरगंज में दोनों ओर से भीषण टक्कर हुई। मातृका प्रसाद कोईराला, वीरेश्वर प्रसाद कोईराला, और सुवर्ण ने नेपाल का पूर्वी मोर्चा, महेन्द्र विक्रम शाह और सूर्य प्रसाद कोईराला ने नेपाल का पश्चिमी मोर्चा सम्भाला। जिन लोगों को बम आदि बनाने की जानकारी थी उन्हें बम बनाने के काम में लगा दिया गया। भारत से हथियारों की खेप भी आयी। के. आई. सिंह, गोविन्द प्रसाद और खड्.ग बहादुर ने भैरहवा पर हमला किया।[14] स्त्रियों ने भी बढ़–चढ़ कर हिस्सा लिया। लिम्बुआन, मांझ–किरात, तेरथुम, भोजपुर, बन्दीपुर, तनहूं, पोखरा, स्यांग्या, दॉग–देउखरी, बर्दिया, हरैचा, बारा, रौतहट, कलैया, गौर बाजार, मौजा, झापा, गौरीगंज, जनकपुर, उदयपुर, उदयपुर गढ़ी, अर्घा–खांची, पशुपति नगर, बोवनिया, सतिया, पाल्पा, फेलाली, कुण्डरी, ठोरी, भैरारी, बसौती, भर्जनी, बर्धवा आदि से भीषण संघर्ष हुए। इसके अलावा चितवन, नारायणपुर, भगवानपुर, गण्डकी क्षेत्र, परासी, महेशपुर, सेमरा, तोंकला, कृष्णानगर और बहादुरगंज पर जोरदार हमले हुए। विराटनगर का युद्ध नेपाल की सशस्त्र क्रान्ति के इतिहास में हमेशा याद रहेगा। विशेश्वर प्रसाद कोइराला और शमशेर सुवर्ण ने एक सेना के ट्रक को टेंक में ही बदल दिया। सरकारी गढ़ के रूप में, विख्यात हाकिम की कोठी पर जोरदार हमला हुआ। हाकिम और उसका पुत्र मारे गये। इसके बाद यहाँ तारिणी प्रसाद कोइराला ने प्रजातंत्र रेडियो स्टेशन स्थापित कर दिया।

शाह वंश की पुनः स्थापना

नेपाली जनमानस राणाओं के खिलाफ हो गया था। इसी बीच ब्रिटिश सरकार के विदेश विभाग के अपने एक अधिकारी ईस्टर डेनिंग रार्बट्स को काठमाण्डू भेजा। ब्रिटिश सरकार और अमरीकी सरकार भारत समर्थक नेपाली राजा त्रिभुवन को पुनः सत्ता में नहीं देखना चाहती थी। नेपाल के लोगों को जब यह पता चला तो काठमाण्डू हवाई अड्डे को नागरिकों विशेषकर छात्रों ने घेर

ISSN
(Print) 2320 – 6446, (Online) 2320 – 8341

लिया। यहाँ इतना जबरदस्त आंदोलन हुआ कि ईस्टर साहब को हवाई अड्डे से ही वापस जाना पड़ा। 1950 का पूरा दिसम्बर महीना ही नेपाल के लिए बहुत ही महत्वपूर्ण रहा। लगभग सभी मोर्चों पर क्रान्तिकारियों को शानदार सफलता मिली। 24 दिसम्बर 1950 को राणा सरकार के तमाम वरिष्ठ अधिकारी अपने–अपने पदों से इस्तीफा देकर क्रान्तिकारियों की ओर आ चुके थे क्योंकि उन्हें राणा शासन का सूर्यास्त नजदीक दिखाई दे रहा था। 25 से 28 दिसम्बर के बीच खबर लगी कि दिगम्बर झा, रूद्र प्रसाद गिरि, बच्चा झा, नेब बहादुर मल्ल, शेर बहादुर, दुर्मादत्त जोशी, भीमदत्त, महेन्द्र नारायण निधि, हेमराज शर्मा, हुकुम बहादुर, आदि ने अनिरूद्ध कोयलावासा, ओखलाढुंग, चैनपुर, महोत्तरी, प्यूठान, सत्यान, मतिहारी, धनकुश, धनुषा, महिनाथपुर को भी कब्जे में ले लिया गया। 5 जनवरी 1951 को पोखरा भी क्रान्तिकारियों ने अपने कब्जे में ले लिया गया। 8 जनवरी 1951 को मोहन शमशेर ने अपनी हार मान ली। भारत के प्रस्ताव को राणा मोहन शमशेर ने माना, जिसमें कहा गया था कि त्रिभुवन वीर विक्रम शाह ही नेपाल के राजा होगें। 10 जनवरी को राजा त्रिभुवन ने अपनी ओर से युद्ध विराम की घोषणा की। मातृका प्रसाद कोइराला ने भी युद्ध विराम की घोषणा कर राजा का सम्मान किया।[15] इस प्रकार पुनः शाह वंश सत्ता में लौटा।

नेपाल सरकार अधिनियम, 1951

एक शक्तिशाली कम्युनिस्ट ताकत के रूप में चीन के उदय के बाद शेष हिमालय में अपने रणनीतिक हितों के प्रति भारत सचेत हो गया। इन घटना–क्रमों को मद्देनजर रखते हुए नेपाल में राजनैतिक अस्थिरता भारत के सामरिक हितों के प्रतिकूल मानी जाने लगी। फरवरी 1951 में नई दिल्ली में, भारत की मध्यस्थता में, एक समझौता किया गया जिसके अंतर्गत राणाओं तथा नेपाली कांग्रेस की एक संयुक्त सरकार के साथ–साथ राजतंत्र की प्रतिष्ठा एवं शक्तियों की बहाली की परिकल्पना की गई। इसे नई दिल्ली समझौता कहा जाता है।[16] 30 मार्च 1951 को राणाओं तथा नेपाली कांग्रेस की नवगठित संयुक्त सरकार ने नई दिल्ली समझौते के तहत, राजा की स्वीकृति से एक अंतरिम संविधान पारित किया, जिसे नेपाल सरकार अधिनियम, 1951 कहा गया। संविधान लागू किये जाने से पहले पद्म शमशेर गद्दी त्याग कर भारत में आ गया था और उसके उत्तराधिकारी मोहन शमशेर ने उसे लागू करने से इंकार कर दिया। यह स्पष्ट हो गया था कि राणा शासक राजनैतिक सुधारों को शुरू करने के लिए तैयार नहीं थे। नेपाली कांग्रेस, तथा अन्य राजनैतिक संगठनों ने राणाओं को उखाड़ फेंकने के लिए एक आंदोलन छेड़ने का निर्णय किया। राणा विरोधी शक्तियों ने तराई क्षेत्र से एक आंदोलन शुरू किया। नेपाल के राजा ने भी इन शक्तियों को अपना समर्थन दिया। भारत ने उससे ठीक पहले नेपाल में राणा शासन को मान्यता प्रदान की थी तथा 1950 में उसके साथ शांति तथा मैत्री की संधि पर हस्ताक्षर किए थे।

नेपाल सरकार अधिनियम, 1951 में कुछ उल्लेखनीय विशेषताओं के साथ उसमें कुछ कमियां भी थी।। पहली यह कि इसमें विधानमंडल का कोई प्रावधान नहीं था। इसकी अनुपस्थिति में मंत्रिमंडल सर्वशक्तिमान बन गया। दूसरी यह कि यह देश का सामान्य कानून था न कि मौलिक कानून। इसे राजा द्वारा अध्यादेश लागू करके रद्द किया जा सकता था। तीसरी यह कि इसमें राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांतों का प्रावधान मौजूद था किन्तु मौजूदा अपमानजनक कानूनों से निजात नहीं मिली थी। इन कमियों के बावजूद यह कहा जा सकता है कि इसने देश में संविधान के निर्माण की प्रक्रिया को आगे बढ़ाया और कानून के शासन की स्थापना का मार्ग प्रशस्त किया। 1951 से लेकर आठ वर्षों की अवधि के दौरान संविधान में तीन बार संशोधन किए गए, इन संशोधनों ने संविधान को पूरे तौर पर नया रूप प्रदान कर दिया। राज्य के नीति निर्देशक सिद्धान्तों को निष्प्रभावी बना दिया गया। तदोपरांत उन्हें नेपाल के किसी भी न्यायालय द्वारा लागू नहीं कराया जा सकता था। संशोधनों ने संविधान में संशोधन करने की शक्ति राजा को सौंप दी जिसे प्रधानमंत्री की नियुक्ति करने की शक्ति भी सौंप दी गई थी। उन्होंने, कुल मिलाकर राजसी निरंकुशता की स्थापना का रास्ता तैयार किया। 1951–59 के बीच की

ISSN
(Print) 2320 – 6446, (Online) 2320 – 8341

राजनीति विभिन्न राजनैतिक पार्टियों तथा गुटों के भीतर कभी न खत्म होती दिखाई पड़ने वाली, गुटबंदियों से भरपूर रही, जो कि सरकारों के भंग हो जाने तक पहुंची। अक्षम तत्वों से मिली–जुली सरकार कुछ महीनों से ज्यादा नहीं टिक सकी। इसलिए राजा को यह व्यवस्था भंग करनी पड़ी। नवम्बर 1951 में उसने एक नई सरकार गठित की, जिसमें पूरे तौर पर नेपाली कांग्रेस के सदस्य ही शामिल किए गए। लगभग पूरे एक दशक तक, अनेक सरकारों को आजमा कर देखा जाता रहा, किन्तु उनमें से कोई भी उन तमाम राजनैतिक तबकों को संतुष्ट नहीं कर सकी, जो सत्ता पर कब्जा करने के लिए संघर्ष कर रहे थे। निम्नलिखित तालिका से सरकारों की अस्थिरता का अनुमान लगाया जा सकता है।[17]

सारणी 1

नेपाल में अस्थिर सरकारें (1951–1959)

क्रं. सं.	सरकार	गठन की तारीख	भंग होने की तारीख
1	राणा–नेपाली कांग्रेस की मोहन शमशेर के प्रधानमंत्रित्व में गठित मिली जुली सरकार।	फरवरी 1951	नवंबर 1951
2	नेपाली कांग्रेस की सरकार, एम.पी. कोइराला जिसके प्रधानमंत्री बने।	नवंबर 1951	अगस्त 1952
3	सलाहकार परिषद के माध्यम से राजा का प्रत्यक्ष शासन	अगस्त 1952	अगस्त 1953
4	अन्य पार्टियों के साथ मिली–जुली, एम.पी. कोइराला की नेशनल डेमोक्रेटिक पार्टी सरकार	अगस्त 1953	मार्च 1955
5	राजा महेन्द्र का प्रत्यक्ष शासन	मार्च 1955	जनवरी 1956
6	टी.पी. आचार्य के नेतृत्व में प्रजा परिषद सरकार	जनवरी 1956	जून 1957
7	के. आई. सिंह के नेतृत्व में यूनाइटेड डेमोक्रेटिक पार्टी की सरकार	जून 1957	नवंबर 1957
8	अपनी पसंद के पार्टी नेताओं से मिलकर बनी एक राष्ट्रीय सरकार में प्रधानमंत्री के रूप में राजा का शासन	नवंबर 1957	जून 1959

उपरोक्त सारणी से स्पष्ट है कि यह समूचा काल राजनैतिक अस्थिरता का काल था। सत्ता के लालच से प्रेरित राजनीतिक नेताओं ने जनतांत्रिक शासन की प्रक्रिया को सहज बनाने के स्थान पर अराजकता और अस्थिरता को ही बढ़ावा दिया। इसके फलस्वरूप, राजतंत्र एक स्वाभाविक सत्ता के केन्द्र के रूप में प्रतिष्ठा एवं प्रभाव अर्जित करने में कामयाब रहा। अपनी स्थाई प्रकृति तथा 1950–51 में जनवादी शक्तियों का पक्ष लेने की वजह से जनता का विश्वास अर्जित कर लेने से, राजतंत्र द्वारा सत्ता पर कब्जा किए जाने पर कोई विपरीत प्रक्रिया नहीं हुई। राजा त्रिभुवन के लिए यह सब कुछ बहुत अच्छा ही रहा। लेकिन 1955 में उसकी मृत्यु के बाद जब उसका बेटा महेन्द्र राजा बना, तब नेपाल में जनतांत्रिक संस्थाओं के निर्माण की प्रक्रिया उलट गई। राजा महेन्द्र संविधान सभा बनाये जाने की वचनबद्धता से मुकर गया। इसके बजाय, राजनैतिक नेताओं के दबाव में, वह देश को एक संविधान प्रदान करने के लिए राजी हो गया जिसमें उसकी संप्रभुत्ता बनी रहे। राजनैतिक नेताओं में फूट थी, क्योंकि वे व्यक्तिगत तथा दलगत गुटों में बंटे हुए थे। उन नेताओं ने भी राजा की सर्वोच्चता को स्वीकार कर लिया था, जिन्होंनें राणाओं का तख्ता पलट दिया था।

जनतंत्र की स्थापना एवं अन्तरिम संविधान का निर्माण

देश के राजनैतिक वातावरण में अस्थिरता से राजा की छवि ऊंची उठी और उसने राजनीति में और अधिक सक्रिय भूमिका निभानी शुरू कर दी। इस घटना–क्रमों ने निश्चय ही नेपाल में संविधान

ISSN
(Print) 2320 – 6446, (Online) 2320 – 8341

निर्माण की प्रक्रिया में विध्न पैदा किया। हालांकि, राजनैतिक दलों ने एक नए संविधान की मांग जारी रखी। अंततः 13 फरवरी 1959 को नेपाल का नया संविधान बना। संविधान का निर्धारण, राजा द्वारा नियुक्त की गई एक संविधान लेखन समिति द्वारा किया गया था। एक संविधान सभा की जनता की मांग को स्वीकार नहीं किया गया।[18] यह संविधान 10 भाग, 77 धाराओं से मिलकर बना था, यह इस दृष्टि से महत्व रखता है क्योंकि इसमें पहली बार राज्य में संसदीय व्यवस्था की परिकल्पना की गयी थी। संविधान में जनता के मौलिक अधिकारों का गिनाते हुए एक विस्तृत अध्याय मौजूद था। इस संदर्भ में इसने 1951 के अंतरिम संविधान का अनुसरण किया। बोलने तथा अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, हथियारों के बिना सभा करने की स्वतंत्रता, संगठित होने अथवा यूनियन बनाने की स्वतंत्रता तथा स्वतंत्रतापूर्वक देश के किसी भी हिस्से में रहने की आजादी आदि जैसे अधिकारों की संविधान में गारंटी की गई। अंतरिम संविधान की तरह ही नये संविधान ने भी धर्म, लिंग, जाति, अथवा जनजाति के आधार पर भेदभाव किए बिना सभी नागरिकों को कानून का एकसमान संरक्षण देने का प्रावधान किया। इन अधिकारों के साथ संविधान में कुछ पाबंदिया भी रखी गयीं। कार्यपालक संरचना में प्रधानमंत्री के नेतृत्व में एक मंत्रीमंडल को शामिल किया गया जिसे राजा के संवैधानिक नेतृत्व के आधीन काम करना था। संविधान में यह स्वीकार कर लिया गया कि निर्वाचित प्रतिनिधियों के सदन में बहुमत वाली पार्टी का नेता प्रधानमंत्री बनाया जाये। संविधान ने राजा को दो प्रकार की शक्तियां सौंपने का प्रावधान कियाः नाममात्र की तथा विवेकी। नाममात्र की शक्तियों के संदर्भ में राजा कैबिनेट की सलाह पर कार्य कर सकता था तथा विवेकी शक्तियों का इस्तेमाल राजा द्वारा प्रत्यक्ष रूप से किया जाना था।[19] संविधान ने एक दो सदन वाले विधानमंडल का प्रावधान किया जिसका प्रमुख राजा को होना था। निचला सदन हाउस आफ रिप्रेजेंटेटिव (प्रतिनिधि सभा) कहलाता था जो आम–वयस्क मताधिकार के आधार पर 5 वर्ष के लिए निर्वाचित 109 सदस्यों से मिलकर बना था। सीनेट कहलाने वाला उच्च सदन 36 सदस्यों वाला एक स्थाई निकाय था, जिसके आधे सदस्यों को आनुपातिक प्रतिनिधित्व के आधार पर हाउस ऑफ रिप्रेजेंटेटिव (निम्न सदन) द्वारा चुना जाना था और शेष आधे सदस्यों को राजा द्वारा मनोनीत किया जाना था। सीनेटरों का कार्यकाल 6 वर्ष था और प्रत्येक दो वर्षों के बाद उनमें से एक तिहाई अवकाश ग्रहण कर लेते थे। संविधान ने एक सर्वोच्च न्यायालय की स्थापना का प्रावधान किया जिसे सर्वोच्च न्यायिक शक्तियां प्रदान की गईं। संविधान ने एक लोक सेवा आयोग की स्थापना के लिए भी प्रावधान किया (जैसा कि 1951 के संविधान के मामले में था)। सरकारी अधिकारियों की भर्ती के लिए परीक्षाएं आयोजित करना इसका कर्तव्य था। यह व्यवस्था दी गई थी कि नागरिक सेवाओं में भर्ती से सम्बन्धित सभी मामलों तथा स्थानांतरण एवं पदोन्नति के मामलों मे भी आयोग से सलाह करना जरूरी होगा। संविधान ने महालेखापरीक्षक, चुनाव आयोग आदि जैसे कार्यालयों की स्थापना के लिए भी प्रावधान किए। संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि 1959 के संविधान ने नेपाल में संसदीय स्वरूप वाली सरकार की स्थापना के लिए व्यवस्थाएं की। इस तरह, यह माना जाने लगा कि इस संविधान के लागू किए जाने के साथ ही राज्य में जनतंत्र की स्थापना के बारे में अनिश्चितता का काल समाप्त हो जाएगा।[20]

1959 के संविधान के प्रावधानों के अनुरूप 18 फरवरी 1959 को नेपाल में पहली संसद के लिए आम चुनाव कराया गया। नेपाली कांग्रेस ने भारी बहुमत से चुनाव जीत लिया और अपनी सरकार बनाई। बी0 पी0 कोइराला पहले निर्वाचित प्रधानमंत्री बने। 1960 के दिसम्बर के मध्य तक देश का शासन नेपाली कांग्रेस के नेतृत्व में जनतांत्रिक राजनैतिक प्रक्रिया के जरिए ही चलाया जाता रहा और राजा वास्तविक अमल में करीब–करीब औपचारिक प्रमुख ही बना रहा। अचानक 15 दिसम्बर 1960 को, राजा ने विधिवत निर्वाचित सरकार को बर्खास्त कर दिया, तभी राजनैतिक नेताओं को बंदी बना लिया, राजनैतिक दलों पर प्रतिबंध लगा दिया और सभी शक्तियां हथिया लीं।[21]

ISSN
(Print) 2320 – 6446, (Online) 2320 – 8341

राजा के प्रत्यक्ष शासन का प्रारम्भ

राजा महेन्द्र ने नेपाल विशेष व्यवस्था अधिनियम, 1961 नामक एक नया कानून लागू किया, जिसने देश की समस्त शक्तियां राजा को सौंप दी। इस तरह से राजा महेन्द्र ने देश में अपना प्रत्यक्ष शासन कायम किया। किन्तु अब तक देश की सामाजिक, आर्थिक तथा राजनैतिक परिस्थितियों में कुछ बदलाव आ चुके थे और राजा के लिए पारम्परिक सत्ता आधारों के साथ देश पर राज करना सम्भव नहीं रह गया था। राजतंत्र की सत्ता को वैधता प्रदान करने के लिए एक लोकप्रिय मुखौटा जरूरी था। अतः देश के लिए एक नये संविधान की रचना करने हेतु एक समिति गठित की गई। परन्तु देश के लिए एक नई राजनैतिक प्रणाली की खोज के पीछे दिखावटी एवं वास्तविक मंसूबों में फर्क था। दिखावटी तौर पर यह कहा गया कि नेपाल जैसे पिछड़े एवं अविकसित देश के लिए पश्चिमी नमूने का जनतंत्र अनुकूल नहीं है, इसलिए कोई ऐसा नमूना अपनाया जाना चाहिए जो नेपाली संस्कृति तथा परम्परा के अनुकूल हो। राजा महेन्द्र ने सबसे निचले स्तरों पर जनतंत्र की स्थापना करने की बातें की। किन्तु असली मंशा यह थी कि एक ऐसी संवैधानिक व्यवस्था की स्थापना की थी। जो जनता की न्यूनतम जनतांत्रिक आकांक्षाओं को पूरा करने का स्वांग करते हुए राजतंत्र की सर्वोच्च सत्ता स्थापित करे। लोकप्रिय मुखौटा राजा के लिए इस मायने में भी उपयोगी था कि राजा के वर्चस्व वाली प्रणाली की सभी विफलताओं का दोष अन्ततः संवैधानिक प्रावधानों पर डाला जा सके। राजा महेन्द्र ने राष्ट्र को इस बात के लिए आश्वस्त करने हेतु प्रचार अभियान शुरू कर दिया कि नेपाल की जनता की जरूरतों एवं आकांक्षाओं को पूरा करने के लिए संसदीय जनतंत्र पर्याप्त नहीं था। इसके विकल्प के रूप में, उसने पंचायत जनतंत्र नामक प्रणाली को जिसके माध्यम से पूरे तीन दशकों तक राजा का एकछत्र वर्चस्व कायम रहा।[22]

पंचायत लोकतंत्र के लिए समिति द्वारा तैयार किए गए संविधान को राजा महेन्द्र द्वारा 16 दिसम्बर 1962 को लागू किया। इसका निर्माण पाकिस्तान में मूल लोकतंत्र, इंडोनेशिया का निर्देशित जनतंत्र तथा मिस्र की वर्ग संगठन प्रणाली की तर्ज पर किया गया था। इसे ''तीसरी दुनिया में जनतंत्र का नमूना'' बताया गया। नेपाल में नई प्रणाली को पंचायत प्रणाली का नाम दिया गया।[23] 1962 के संविधान की सबसे उल्लेखनीय विशेषता यह थी कि इसने नेपाल मे ंदल विहीन पंचायत प्रणाली स्थापित की।

प्रत्यक्ष शासन की समाप्ति एवं जनतंत्र की पुनः स्थापना

1972 में राजा महेन्द्र की मृत्यु के बाद राजा वीरेन्द्र को पंचायत प्रणाली तथा निरंकुश सत्ता विरासत में मिली। किन्तु वह व्यवस्था में बदलाव के लिए पड़ने वाले दबावों का सामना नहीं कर पाया। 12 दिसम्बर 1975 को, उसने प्रणाली में अनेक परिवर्तनों की घोषणा की जो कि राजसी निरंकुशता को बरकरार रखने के लिए महज दिखावटी संवैधानिक टीमटाम ही थी। राष्ट्रीय पंचायत की सदस्यता 90 से बढ़ाकर 135 कर दी गई तथा राजा की मनोनीत करने की शक्ति 15 प्रतिशत से बढ़ाकर 20 प्रतिशत कर दी गई। 14 क्षेत्रों को समाप्त कर दिया गया और उन्हें चार डिवीजनों में पुनः संगठित कर दिया गया। सबसे अधिक बेहूदा परिवर्तन था, राजा के प्रत्यक्ष नियंत्रण में गाँवों की ओर वापसी के राष्ट्रीय अभियान के एक अतिरिक्त संवैधानिक निकाय का उत्थान। इस निकाय को 4000 ग्राम पंचायतों के स्तर पर राजनैतिक प्रक्रिया को नियंत्रित करने की व्यापक शक्तियां प्रदान की गईं और एक तरह के पोलित ब्यूरो की तरह उसका संचालन किया गया।[24]

राजा वीरेन्द्र के शासन के दौरान पंचायत प्रणाली के विरोध में विपक्षी गतिविधियाँ जोर पकड़ने लगीं। वामपंथी दल तथा नेपाली कांग्रेस, प्रतिबंध के बावजूद देश के भीतर तथा बाहर, नेपाल में व्यवस्था को उखाड़ फेकने के लिए सक्रिय हो गए। पंचायत प्रणाली स्वयं भी बदनाम हो गई थी तथा यथास्थितिवादियों की मुख्य चिन्ता बढ़ते विरोध तथा जन असंतोष के विरूद्ध इसे जारी रखने पर ही केन्द्रित थी। अनेक मोर्चों पर प्रणाली की असफलता तथा प्रशासन में बढ़ते भ्रष्टाचार तथा मनमानी ने

ISSN
(Print) 2320 – 6446, (Online) 2320 – 8341

मई–जून 1979 में हुए राष्ट्रव्यापी हिंसक विद्रोह के दौरान प्रणाली को पतन के कगार पर पहुंचा दिया। यह जून में अपने चरमोत्कर्ष पर पहुंचा जबकि काठमाण्डू में जीवन अस्त–व्यस्त हो गया था और कुछ सरकारी प्रतिष्ठानों में आग लगा दी गई थी। पूरे तौर पर भ्रमित राजा ने 24 जून 1979 को इस प्रश्न पर जनमत संग्रह कराए जाने की घोषणा की कि क्या जनता पर्याप्त सुधारो के साथ मौजूदा प्रणाली को जारी रखे जाना पसंद करेगी अथवा एक बहुदलीय प्रणाली को प्राथमिकता देगी, जिसकी मांग राजनैतिक दलों द्वारा की जा रही थी।

पुनः जनमत संग्रह में जनता तथा प्रतिबंधित राजैतिक दलों द्वारा स्वतंत्र रूप से एवं निडर होकर भागीदारी संभव बनाने की दृष्टि से राजा के संविधान में बिना कोई औपचारिक संशोधन किए ही तदर्थ रूप से प्रणाली को उदार बना दिया। 'गांव की तरफ वापसी' का राष्ट्रीय अभियान स्थगित कर दिया गया। राजनैतिक दलों को बिना खास रोक–टोक के काम करने की इजाजत दे दी गई। प्रेस भी विभिन्न पाबंदियों एवं सेन्सरशिप से अपेक्षाकृत स्वतंत्र हो गया। जनता को अपनी राय की अभिव्यक्ति तथा राजनीति में खुलकर भाग लेने की स्वतंत्रता प्रदान की गई। जनमत संग्रह, जून 1980 में कराया गया। जनमत संग्रह के नतीजे उस समय की पंचायत प्रणाली को जारी रखने के पक्ष में आये। इसके अनेक कारण थे, जैसे जनतंत्र समर्थक शक्तियों में आत्मतुष्टता और पारस्परिक मन मुटाव वामपंथी रूझान वाली राजनैतिक पार्टियों द्वारा जनतंत्र समर्थक दलों के साथ एकता बनाये रखना और जनमत संग्रह कराए जाने में एक साल का विलम्ब पंचायत शक्तियों द्वारा सरकारी तंत्र का दुरूपयोग तथा जनता जनमत संग्रह की प्रक्रिया में व्यापक हेराफेरी किए जाना। किन्तु यह स्पष्ट हो गया कि जनता का विशाल हिस्सा (46 प्रतिशत) इसके विरोध में था। राजनैतिक पार्टियों के नेताओं के बीच पारास्परीक तालमेल न होना ही उनकी विफलता का प्रमुख कारण था।[25] राजा बीरेन्द्र ने संविधान में कुछ सुधारों को शामिल कर लेना जरूरी समझा ताकि बदलती परिस्थितियों के अनुसार पंचायत प्रणाली को समायोजित किया जा सके। इसके परिणामस्वरूप दिसम्बर 1980 में तीसरा संशोधन पेश किया गया। राष्ट्रीय पंचायत की सदस्यता को बढ़ाकर 140 कर दिया गया, जिनमें से 112 को आम व्यस्क मताधिकार के आधार पर प्रत्यक्ष रूप से निर्वाचित किया जाना था तथा 28 को राजा द्वारा मनोनीत किया जाना था। पंचायत प्रणाली के तहत राष्ट्रीय पंचायत के प्रत्यक्ष निर्वाचन का प्रावधान पहली बार शुरू किया गया।

पंचायत प्रणाली पर अंतिम प्रहार नेपाली कांग्रेस तथा कम्यूनिस्टों द्वारा संयुक्त रूप से चलाये गए एक आंदोलन की शक्ल में सामने आया। इसने पंचायत प्रणाली के उन्मूलन तथा राज्य में जनतंत्र की स्थापना की मांग की। आंदोलन इतना तीव्र हो गया कि राजा बीरेन्द्र के पास इसके अलावा कोई विकल्प ही नहीं बचा कि वह अप्रैल 1990 में पंचायत प्रणाली की समाप्ति की घोषणा करें।[26] देश के लिए एक नया संविधान तैयार करने के लिए एक ''संविधान समिति'' बनाई गई। अंतरिम अवधि के लिए नेपाल कांग्रेस, कम्यूनिस्ट पार्टी तथा राजा के मनोनीत सदस्यों की एक मिली–जुली सरकार गठित की गई। नवम्बर 1990 में नया संविधान लागू किया गया और इसके साथ ही नेपाल में जनतांत्रिक व्यवस्था की पुनः स्थापना हुई।

संदर्भ सूची

1. मंजूपुरिया, टी.सी. एण्ड इंदिरा मंजूपुरिया, 1984, द कम्पलीट गाइड टू नेपाल, एम.डी. गुप्ता, ग्वालियर, पृष्ठ 9.
2. कैरी मोरन, 1991, नेपाल हैण्डबुक, मून पब्लिकेशन, कैलीपोर्निया, पृष्ठ 15.
3. नेपाली आवाज, 5–12 फरवरी 1990.
4. इण्डियन एक्सप्रेस, 6, जून, 1991.
5. दैनिक जागरण, 17 अप्रैल 2009.

ISSN
(Print) 2320 – 6446, (Online) 2320 – 8341

6. श्रीवास्तव, के.पी. 1986, नेपाल का इतिहास, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली. पृष्ठ 155
7. समकालीन तीसरी दुनिया, जनवरी–फरवरी, 2011, पृष्ठ 51.
8. गोफरे, ओस्टरगार्ड 1885, नानवायलेन्ट रिवोल्यूशन इन इण्डिया, गाँधी पीस फाउन्डेशन, नई दिल्ली, पृष्ठ 154.
9. काठमाण्डू पोस्ट, 9 मई 2005.
10. द हिन्दु, 22 अप्रैल 2006.
11. राष्ट्रीय सहारा, 24 नवम्बर 2006
12. इकोनोमिक एण्ड पॉलिटिकल वीकली, 22 जुलाई 2006, नं. 3170, पृष्ठ 71.
13. आई. जी. सी., 2007, नेपाल कान्सटीट्यूशनल प्रोसेज, एशिया रिपोर्ट नं. 128, 26 फरवरी, पृष्ठ 5–6.
14. हिन्दुस्तान टाइम्स, 3 अक्टूबर 2007.
15. पदमजा मूर्ति ''नेपाल माओइस्ट इन द पालिटिकल मेनस्ट्रीम'' वर्ल्ड फोकस, 345, सितम्बर 2008, पृष्ठ 341.
16. आनन्द स्वरुप वर्मा के साक्षात्कार पर आधारित.
17. हिन्दुस्तान, 28 मई 2008
18. पूर्वोक्त.
19. वैदिक, वेद प्रताप, "नेपाल में जारी राजनैतिक अस्थिरता का दौर", राष्ट्रीय सहारा, अगस्त 2008.
20. पूर्वोक्त.
21. जनसत्ता, 23 अगस्त 2008.
22. बिगुल, फरवरी 2008.
23. पूर्वोक्त.
24. जनसत्ता, 18 अगस्त 2008
25. बराल, लोकराज 1993, नेपालः राजनीति की समस्याएं, कोणार्क पब्लिकेशन, नई दिल्ली, पृष्ठ 29.
26. पूर्वोक्त 31.